© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

विष्णु–भक्ति का स्वरूप : विष्णु पुराण के सन्दर्भ में

अशोक कुमार वर्मा
शोधच्छात्र संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद

भारतीय वाङ्मय में पुराण–साहित्य के लिए एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण स्थान है। धार्मिक परम्परा में वेद के पश्चात् पुराण की ही अधिमान्यता है। पुराण भारतीय जीवन–साहित्य के रत्ननिर्मित अमूल्य श्रृंगार हैं और अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ने वाली स्वर्णमयी श्रृंखला है। विश्व साहित्य के अक्षय भण्डार में अष्टादश महापुराण अनुपम एवं सर्वश्रेष्ठ अष्टादश रत्न हैं। ये हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, धार्मिक, दार्शनिक जीवन को स्वच्छ दर्पण के समान प्रतिबिम्बित करते हैं और साथ ही सरल भाषा एवं क्रमबद्ध कथानक–शैली के कारण प्राचीन होते हुए भी नवीनतम स्फूर्ति को संचारित भी। प¥च लक्षण पुराणों में सृष्टि से आरम्भ कर प्रलय तक का इतिवृत्त, मध्यकालीन मन्वन्तरों और राजवंशों के उत्थान–पतन का चित्रण, विद्वता के प्रतिनिधि ऋषि और मुनियों के चरित एवं सामाजिक रीति–रिवाजों के वर्णन पाये जाते हैं। पुराणों में केवल धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पुरुषार्थों के उपदेशों से संवलित आख्यान[1] ही अंकित नहीं हैं, अपितु, इनमें समाजशास्त्रीय महनीय सिद्धान्त भी पूर्णतया चित्रित हैं। इतिहास, समाज और संस्कृति को सम्यक् प्रकार से जानने के लिए पुराणों की उपयोगिता सर्वाधिक है।

उपलब्ध पुराण वाङ्मय में ब्रह्माण्डपुराण, विष्णुपुराण, पद्मपुराण और वायुपुराण को प्राचीन माना जाता है। इन पुराणें में बताया गया है कि वेदव्यास ने आख्यान, उपाख्यान गाथा और कल्पशुद्धि के साथ पुराण संहिता की रचना की। व्यास के सूतजातीय लोमहर्षण नामक एक प्रसिद्ध शिष्य थे। उन्होंने उस शिष्य को पुराण संहिता अर्पित की। लोकहर्षण के सुमति, अग्निवर्चा, मित्रयु, शांशपायन, अकृतव्रण और सावर्ण्य नामक छः शिष्य थे। इनमें से कश्यप वंशीय अकृतव्रण, सावर्ण्य और शांशपायन – इन तीनों ने लोमहर्षण से मूलसंहिता का अध्ययन कर और उस अधीत ज्ञान के आधार पर एक पुराण संहिता की रचना की। उक्त चारों संहिताओं का संग्रहरूप यह विष्णुपुराण है।

विष्णुपुराण ही एक ऐसा पुराण है, जिसमें प¥चलक्षणरूप परिभाषा घटित होती है। सृष्टि निर्माण, प्रलय, ऋषि और मुनियों के वंश का इतिवृत्त, राजाओं और पौराणिक व्यक्तियों के उपाख्यान एवं धर्म के विविध अंगों का निरूपण इस पुराण में किया गया है। विष्णुपुराण में वैष्णव मत का समुचित परिपाक प्रदर्शित होता है, जिसका मुख्य प्रतिपाद्य विषय विष्णु का आराध्य पक्ष है। इसमें यह दर्शाया गया है कि विष्णु के स्वरूप में ही विश्व का सृजन, संरक्षण तथा संहरण सन्निहित है तथा उनकी भक्ति से ही मुक्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। व्यक्ति भगवत् परायण होकर भक्ति के द्वारा उसी में अपने चित्त को नियोजित कर अनायास ही सभी दुःखों से मुक्ति पा जाता है। भक्ति सर्वसुलभ है, जो सभी मनुष्यों को समान भाव से मोक्ष का अधिकारी बना देती है।

विष्णु एक ऋग्वैदिक देवता हैं किन्तु ऋग्वेद में उनका स्थान इन्द्र की महत्ता से आच्छादित है और वह इन्द्र के सहायक और उपेन्द्र के रूप में चित्रित हैं जो इन्द्र की प्रेरणा से सोमपान करते हैं तथा असुरों के धनों का अपहरण करते हैं। उत्तर वैदिक काल में उनकी प्रतिष्ठा में वृद्धि होती प्रतीत होती है। क्योंकि शतपथ ब्राह्मण विष्णु को देवों में श्रेष्ठतम कहता है।[2]

विष्णुपुराण में विष्णु को 'सर्वेश' कहकर उनमें सभी जीवों की प्रतिष्ठा बतलायी गयी है। वे कालातीत हैं और उनका विनाश असम्भव है, वे ही सभी के आश्रय हैं।[3] इसी पुराण में उल्लिखित है कि इन्द्र ने सौ यज्ञों के द्वारा विष्णु को परितुष्ट करके ही अमरेशत्व को प्राप्त किया[4] एवं विष्णु की संतुष्टिपूर्वक ही बलि ने एक मन्वन्तर तक निर्विरोध इन्द्रत्व का उपभोग किया।[5] इस प्रकार हम देखते हैं कि पौराणिक काल में विष्णु को प्रधान देवता का स्थान प्राप्त हो गया।

विष्णु की उपासना के सम्बन्ध में 'भक्ति' का प्रयोग 'मत्स्य' और 'विष्णुपुराण' में दो अति महत्वपूर्ण स्थलों पर हुआ है। मत्स्यपुराण में इसका उल्लेख **विभूतिद्वादशी** नामक व्रत के प्रसंग में हुआ है। कहा गया है कि केशव को संतुष्ट करने का एकमात्र उपाय–भक्ति है।[6] विष्णुपुराण में बतलाया गया है कि राजा शतधनु भक्ति–मार्ग का अवलम्बन कर विष्णु का चिन्तन करते थे।[7] जब ध्रुव को सर्वोत्तम स्थान प्राप्त करने की प्रबल जिज्ञासा हुई तब सप्तर्षियों द्वारा उसे विष्णु– भक्ति का मार्ग बताया गया। मरीचि ऋषि कहते हैं कि बिना गोविन्द की आराधना के मनुष्य को परमपद नहीं मिल सकता। अत्रि के अनुसार, ''परम पुरुष जनार्दन परा प्रकृति इत्यादि से भी परे हैं, वे जिससे संतुष्ट होते हैं, उसी को परमपद मिलता है।'' अंगिरा समस्त जगत् को अच्युत से ओत–प्रोत बताते हुए कहते हैं कि विष्णु की

अराधना करने से अतिदुर्लभ पद 'मोक्ष' की भी प्राप्ति होती है, क्योंकि विष्णु परब्रह्म, परधाम और परस्वरूप हैं। पुलह कहते हैं कि विष्णु यज्ञपति एवं जगत्पति हैं। उनकी अराधना करने से इन्द्र ने श्रेष्ठ 'ऐन्द्र' पर को प्राप्त किया, अतएव उनकी अराधना अपेक्षित है। क्रतु के अनुसार विष्णु परम् पुरुष, यज्ञस्वरूप तथा योगेश्वर हैं। उनकी अराधना करने से मन की कोई भी इच्छा पूर्ण हो सकती है, फिर त्रैलोक्य के अन्तर्गत स्थान प्राप्ति का कहना ही क्या।[8] अन्यत्र कहा गया है कि विष्णु अपने द्वेषियों द्वारा कीर्तित होने पर उन्हें फल प्रदान करते हैं फिर जो लोग उनकी भक्ति करते हैं उनको दुर्लभ फल देना तो उनका नियम ही है।[9]

विष्णुपुराण कहता है कि विष्णु की उपासना करने वाले मनुष्य को चाहिए कि वह पहले समस्त वाह्य विषयों से मन को निवृत्त करे, तत्पश्चात् उसे जगत् के एकमात्र आधार विष्णु में स्थिर करे। इस प्रकार तन्मयीभूत होकर विष्णु का जप[10] करना चाहिए। नृप शतधनु तन्मय–भाव से विष्णु की उपासना करते हुए चित्रित किये गये हैं।[11] विष्णु विकास रहित हैं, नित्य हैं तथा उनका रूप सदैव एक सा रहता है। वे विश्व के अधिष्ठान हैं, सूक्ष्मतर से भी सूक्ष्म हैं तथा विश्व की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के मूल कारण हैं।[12] उनका पारमार्थिक रूप अत्यन्त निर्मल है तथा वे ज्ञानमय हैं, पर से भी पर हैं, अन्तरात्मा में उनका निवास है। वे नाम, वर्ण, रूप और विशेषण इत्यादि से सर्वथा रहित हैं और उनमें जन्म, वृद्धि जरा, परिणाम, क्षय का सर्वथा अभाव है। उनके विषय में **'वे हैं'** केवल इतना ही कहा जा सकता है।[13] वे स्वयं को ही परिपालित करते हैं तथा स्वयं का ही उपसंहार करते हैं। ऐसे विष्णु सर्वश्रेष्ठ हैं, उपासना के योग्य हैं तथा भक्त को वर देने वाले हैं।[14]

विष्णुपुराण में उनके पर्वत और समुद्र दो आवासों का वर्णन मिलता है। वायुपुराण में भी विष्णु का प्रासाद निषद् पर्वत पर बताया गया है जिसको भ्रमण करते हुए पुरूरवा ने देखा था। पर सामान्यरूपेण समुद्र को ही विष्णु का आवास रूप में दिखाया गया है जहाँ वह लक्ष्मी के साथ निवास करते हैं। एक स्थल पर उल्लिखित है कि इन्द्रादि देवता उनका दर्शन करने के लिये क्षीरसागर के तट पर गये थे। देवों की स्तुति के पश्चात् जब विष्णु प्रकट हुए तो शंख, चक्र और गदा धारण किये हुए गरूण पर आरूढ़ थे। विष्णुपुराण के अनुसार उनकी आँखें विकसित कमल के समान हैं, वे पीताम्बर धारण करते हैं, उनके अलंकार, किरीट, केयूर, हार, कटक इत्यादि हैं, उनकी चारों भुजाओं में शंख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित होते हैं।

पौराणिक विष्णु–भक्ति का सूक्ष्म स्वरूप औपनिषदिक वर्णन से बहुत साम्य रखता है। जैसे – विष्णुपुराण में नारायण को हृदयस्थ माना गया है।[15] इसी प्रकार **काठक संहिता** में भी उपास्य देव की स्थिति आत्मा में बतायी गयी है।[16] विष्णु–भक्ति की पराकाष्ठा अन्य ग्रंथों में भी व्यक्त की गयी है। महाभारत के शान्तिपर्व में उल्लिखित है कि श्रीकृष्ण को किया हुए एक प्रणाम भी दश अश्वमेध यज्ञों के समान है।[17] **हरिवंश पुराण** के अनुसार सत्त्वगुण में स्थित होकर सदा ही हरि का ध्यान करना चाहिए।[18]

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. विष्णुपुराण, वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई श्रीधरी टीका से उद्धृत।
2. तद्विष्णुः प्रथमः प्राप। स देवानां श्रेष्ठोऽभवत्तस्मादाहुर्विष्णुः देवानां श्रेष्ठ इति। ... शतपथ ब्राह्मण 14/1/1/5
3. सर्वेश सर्वभूतात्मन्सर्वं सर्वाश्रच्युत, प्रसीद विष्णो ... विष्णुपुराण 1/9/57
4. इष्ट्वा यमिन्द्रो यज्ञानां शतेनामरराजताम्। विष्णुपुराण 5/17/7
5. यत्राम्बु विन्यस्य बलिर्मनोज्ञा ... मन्वन्तरं पूर्णमपेतशत्रुम।। विष्णुपुराण 5/17/30
6. भक्तया तुष्यति केशवः। मत्स्य पुराण 100/36
7. आराधयामास विभुं ... भक्तितः ... नान्यमानसः। विष्णुपुराण 3/18/55–56
8. विष्णुपुराण 1/11/40–49
9. अयं हि भगवान् ... सम्यक्भाक्तमतामिति।। विष्णुपुराण 4/15/17
10. विष्णुपुराण 1/11/53–55
11. विष्णुपुराण 3/18/55

12. अविकाराय – नित्याय – विश्वस्य स्थितौ सर्गे तथा प्रभुम्। ... विष्णुपुराण 1/2/1–5
13. विष्णुपुराण 1/2/10–13
14. स एव सृज्यः स च सर्गकता। विष्णुपुराण 1/2/70
15. नारायणोऽयनं धाम्नां तस्याधारः स्वयं ह्रदि।। विष्णुपुराण 2/9/4
16. तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिःशाश्वती। ... काठक संहिता 2/5/12
17. एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामों दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः। महा0 शान्तिपर्व 47/91
18. हरिरेकः सदा ध्येयो भवद्भि सत्त्वसंस्थितैः। हरिवंश पुराण 3/89/9